जैन न्याय के कतिपय प्रमुख गाथा-श्लोक

—प्रो. वीरसागर जैन

किसी भी विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिए और प्राप्त ज्ञान को ठीक से पचाने के लिए उस विषय से सम्बन्धित कुछ छन्दों (गाथाओं या श्लोकों) को कंठस्थ करना बड़ा उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि वे सूत्रात्मक-से होते हैं और काव्यात्मक भी होते हैं, जिनमें गद्य की अपेक्षा कुछ विशेष शक्ति होती है। यही कारण है कि मैं अपने विद्यार्थियों को जैन न्याय के कतिपय महत्त्वपूर्ण गाथा-श्लोक भी कंठस्थ करने की बहुत प्रेरणा देता रहता हूँ। इन गाथा-श्लोकों को कंठस्थ करने से और भी अनेक प्रकार के लाभ होते हैं। कोई भी विद्यार्थी इनके आधार से कभी भी जैन न्याय का कुछ अभ्यास स्वतः ही कर सकता है अथवा किसी अन्य से भी न्याय की कुछ चर्चा प्रारम्भ कर सकता है। इन गाथा-श्लोकों के माध्यम से हमें शनैः-शनैः इस विषय की गहराई का अनुभव होने लगता है। लेखनकार्य करना हो तो भी ये गाथा-श्लोक प्रमाण या सन्दर्भ बनकर हमारे लेखन को गुणवत्ता प्रदान करते हैं, उसे शोधपूर्ण बनाते हैं। इसी प्रकार के और भी अनेक लाभ इन गाथा-श्लोकों को कंठस्थ करने से होते हैं, अतः यहाँ जैन न्याय से सम्बन्धित कतिपय महत्त्वपूर्ण गाथा-श्लोकों का संग्रह करते हैं। यथा—

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये॥ —(आचार्य उमास्वामी, तत्त्वार्थसूत्र)

अर्थ— जो मोक्षमार्ग के नेता हैं, कर्म पर्वतों के भेत्ता हैं और विश्व तत्त्वों के ज्ञाता हैं, मैं उन्हें उनके गुणों की प्राप्ति के लिए प्रणाम करता हूँ।

भवबीजांकुरजनना: रागाद्या: क्षयमुपगता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै॥ —(स्याद्वादमंजरी, प्रस्तावना, पृष्ठ 27)

अर्थ— जिसने संसार के कारणभूत रागादि का क्षय कर दिया है, उसे नमस्कार हो, चाहे वह ब्रह्मा हो या विष्णु हो या हर हो या जिन हो।

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेष: कपिलादिषु।
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्य: परिग्रह:॥

अर्थ— मुझे महावीर से कोई पक्षपात नहीं है और कपिलादि से कोई द्वेष नहीं है; परन्तु जिसके वचन युक्तिसंगत हों, उसी का ग्रहण करना चाहिए।

प्रमाणादर्थसंसिद्धिस्तदाभासाद्विपर्यय: ।
इति वक्ष्ये तयोर्लक्ष्म सिद्धमल्पं लघीयस:॥'' —(आचार्य माणिक्यनन्दि, परीक्षामुखसूत्र)

अर्थ— प्रमाण से अर्थ की सम्यक् सिद्धि होती है और प्रमाणाभास से विपरीत सिद्धि होती है, इसलिए मैं यहाँ उन दोनों का स्वरूप संक्षेप में अल्पबुद्धियों के लिए सरलता और प्रामाणिकता से कहता हूँ।

प्रदीप: सर्वविद्यानामुपाय: सर्वकर्मणाम्।
आश्रय: सर्वधर्माणां शश्वदान्वीक्षिकी मता॥'' —(चाणक्य, अर्थशास्त्र, विधोद्देश प्रकरण, 2)

अर्थ— आन्वीक्षिकी विद्या (न्यायविद्या) शाश्वत काल से ही सर्व विद्याओं का प्रदीप, सर्वकर्मों का उपाय और सर्वधर्मों का आश्रय मानी गई है।

जो ण पमाणणएहिं णिक्खेवेण णिरिक्खदे अट्ठं।
तस्साजुत्तं जुत्तं जुत्तमजुत्तं च पडिहादि॥''—(आचार्य यतिवृषभ, तिलोयपण्णत्ति, 1/82)

अर्थ— जो जीव प्रमाण, नय, निक्षेपों के द्वारा अर्थ की परीक्षा नहीं करता है उसे अयुक्त भी युक्त और युक्त भी अयुक्त की तरह प्रतिभासित होता है।

तच्चाणेसणकाले समयं बुज्झेहि जुत्तिमग्गेण।
णो आराहणसमये पच्चक्खो अणुहवो जम्हा॥'' —(माइल्लधवल, नयचक्र, 268)

अर्थ— 'समय' (आत्मा/वस्तु/सिद्धान्त) को तत्त्वान्वेषण के समय युक्तिमार्ग (न्याय) से समझो, किन्तु उसकी

आराधना (अनुभूति) के समय न्याय का अवलम्बन मत लो, क्योंकि अनुभूति तो प्रत्यक्ष (निर्विकल्प) होती है।

अपरीक्षितं न कर्तव्यं, कर्तव्यं सुपरीक्षितम्।
पश्चाद्भवति सन्तापो, ब्राह्मणी नकुलं यथा॥ —आचार्य रत्नकीर्ति, आराधनासार-टीका, 49

अर्थ— हमें कभी भी अपरीक्षित कार्य नहीं करना चाहिए, अपितु अच्छी तरह परीक्षा करके ही करना चाहिए; क्योंकि जो व्यक्ति अपरीक्षित कार्य करते हैं, उन्हें बाद में बहुत सन्ताप होता है, जैसे कि ब्राह्मणी को नकुल को मारने के बाद हुआ था।

न श्रद्धयैव त्वयि पक्षपातो, न द्वेषमात्रादरुचिः परेषु।
यथावदाप्तत्वपरीक्षया तु, त्वामेव वीरप्रभुमाश्रिता स्मः॥
—आचार्य हेमचन्द्र, अन्ययोगव्यवच्छेदिका, 29

अर्थ— हे महावीर! मैं केवल श्रद्धा से ही आपका पक्ष नहीं ले रहा हूँ और द्वेष मात्र से ही अन्यों से अरुचि नहीं रखता हूँ, अपितु ठीक से परीक्षा करके ही केवल आपकी शरण लेता हूँ।

णत्थि णएहि विहूणं, सुत्तं अत्थोव्व जिणवरमदम्हि।
तो णयवादे णिउणा, मुणिणो सिद्धंतिया होंति॥ —(आचार्य वीरसेन, धवला, 1/1/1/68)

अर्थ— नयों के बिना सूत्र या अर्थ कुछ भी जिनमत में नहीं कहा है, अतः जो मुनि नयवाद में निपुण होते हैं वे ही सिद्धान्तज्ञ होते हैं।

जावदिया वयणपहा, तावदिया चेव होंति णयवादा।
जावदिया णयवादा, तावदिया चेव परसमया॥ —(आचार्य वीरसेन, धवला, 1/1/1/67)

अर्थ— जितने वचन हैं उतने ही नयवाद हैं और जितने नयवाद हैं उतने ही परसमय हैं।

जइ जिणमयं पवज्जह, ता मा ववहारणिच्छए मुयह।
एक्केण विणा छिज्जइ, तित्थं अण्णेण पुण तच्चं॥
—(आचार्य अमृतचन्द्र, समयसार-टीका, गाथा 11)

अर्थ— यदि जिनमत का प्रवर्तन करना चाहते हो तो व्यवहार और निश्चय दोनों नयों को मत छोड़ो। एक के बिना तीर्थ का नाश हो जाएगा और दूसरे के बिना तत्त्व का।

जदि इच्छह उत्तरिदुं, अण्णाणमहोदहिं सुलीलाए।
ता णादुं कुणह मइं, णयचक्के दुणयतिमिरमत्तंडे॥ —(माइल्लधवल, नयचक्र, 419)

अर्थ— यदि अज्ञान-सागर को लीलामात्र में पार करना चाहते हो तो नयचक्र में बुद्धि लगाओ, यही दुर्नय-तिमिर को नष्ट करने के लिए सूर्य है।

लवणं व इणं भणियं, णयचक्कं सयलसत्थसुद्धकरं।
सम्मा वि य सुअ मिच्छा, जीवाणं सुणयमग्गरहिदाणं॥ —(माइल्लधवल, नयचक्र, 417)

अर्थ— नमक के समान सब शास्त्रों की शुद्धि करने वाला तत्त्व नयचक्र ही कहा गया है। जो जीव सुनयमार्ग से रहित होते हैं, उनके लिए सम्यक् श्रुत भी मिथ्या है।

जे णयदिट्ठिविहीणा, ताण ण वत्थूसहावउवलद्धि।
वत्थुसहावविहूणा, सम्मादिट्ठी कहं हुंति॥ —(माइल्लधवल, नयचक्र, 181)

अर्थ— जो व्यक्ति नयदृष्टि-विहीन हैं, उन्हें वस्तुस्वरूप का सही ज्ञान नहीं हो सकता और वस्तुस्वरूप को नहीं जानने वाले जीव सम्यग्दृष्टि कैसे हो सकते हैं?

परसमयाणं वयणं, मिच्छं खलु होदि सव्वहा वयणा।
जेणाणं पुण वयणं, सम्मं खु कहंचि वयणादो॥
—आचार्य नेमिचन्द्र, गोम्मटसार, कर्मकाण्ड, गाथा 895

अर्थ— परसमयवालों के वचन 'सर्वथा' शब्द सहित होने के कारण मिथ्या होते हैं, किन्तु जैनों के वही वचन 'कथंचित्' शब्द सहित होने के कारण सम्यक् होते हैं।